चातुर्मास
आत्म-उल्लास का पर्व

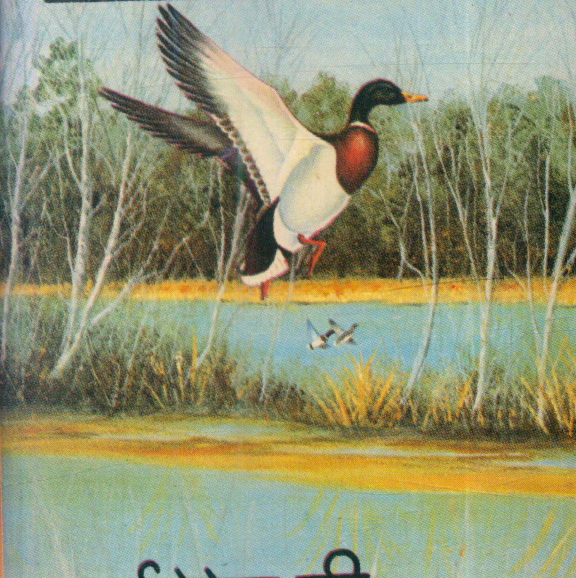

उपाचार्य देवेन्द्र मुनि

श्री नमस्कार महामंत्र

नमो अरिहंताणं,

नमो सिध्दाणं,

नमो आयरियाणं,

नमो उवज्झायाणं,

नमो लोए सव्व साहूणं

एसो पंचनमोक्कारो, सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलम्॥

चातुर्मास :
आत्म उल्लास का पर्व

उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनि

प्रकाशक
श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय
शास्त्री सर्कल
उदयपुर (राज.)
पिन-३१३ 001

- अर्थ सौजन्य—
  अखण्ड सौभाग्यवती श्रीमती पवन देवी
  अखण्ड सौभाग्यवती श्रीमती सुशीला देवी
  लोढ़ा
  द्वारा ओवरसीज ट्रेड एजेन्सीज
  स्टेशन रोड, अजमेर (राज.)

- मुद्रकः
  संजय सुराना के लिए
  कामधेनु प्रिंटर्स एंड पब्लिसर्स
  अवागढ़ हाऊस, एम. जी. रोड,
  आगरा—282 002.

- प्रथमवार—
  वि. स. २०४७ चैत्र
  ईस्वी सन् १९९० अप्रेल

- मूल्यः लागत मात्रः २ रुपया ५० पैसा

प्राथमिकी

जीवन का एक-एक क्षण मूल्यवान है। बीता हुआ क्षण कभी लौटकर आता नहीं, और आने वाला क्षण हमारे हाथ में नहीं, इसलिए वर्तमान क्षण का सदुपयोग कर सार्थक बनाना, यही हमारे वश में है।

कम से कम समय व श्रम में मनुष्य सुविधापूर्वक अधिक से अधिक लाभ उठा सके, इसलिए आजकल प्रत्येक वस्तु का लघु-संस्करण (मिनी एडीशन) हो रहा है। साहित्य क्षेत्र में भी अब भारी भरकम ग्रंथों की अपेक्षा छोटी पुस्तकें, जेबी गुटके पसन्द किये जाते हैं। जिन्हें अवकाश के कुछ क्षणों में पढ़कर लाभ उठाया जा सकता है ।

अनेक पाठकों ने अनेक बार मुझसे आग्रह किया है कि मैं इस प्रकार की छोटी-छोटी पुस्तकें लिखूं, जिन्हें गागर में सागर कहा जा सके और पाठक सुविधा अनुसार कहीं भी साथ में रखकर ज़ब फुर्सत मिले, तब पढ़ सकें ।

पाठकों की भावना को ध्यान में रखकर मैंने इस प्रकार के कुछ लघु निबन्ध लिखे जो कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक सार्थक सन्देश दे सकें ।

इस आयोजन में पूज्य गुरुदेव श्री उपाध्याय पुष्कर मुनि जी महाराज सा. की कृपा एवं प्रेरणा मेरी सफलता का मूल रहीं है ।

श्रीचंद जी सुराना "सरस" का सहयोग सदा स्मरणीय रहेगा ।

—उपाचार्य देवेन्द्रमुनि

चातुर्मास : आत्म-उल्लास का पर्व

चातुर्मास—चार अक्षरों का एक छोटा-सा शब्द है, लेकिन अपने इस सूक्ष्म कलेवर में अनेक प्रेरणाओं/रहस्यों को छिपाये हुए है । सांसारिक दृष्टि से भी और आध्यात्मिक दृष्टि से भी ।

इसका शब्दार्थ होता है—चार मास, चार महीने । लेकिन वर्ष में तो बारह मास होते हैं। और बारह मास में तीन चातुर्मास आते हैं—श्रावण से कार्तिक तक अर्थात् आषाढ़ी पूनम से कार्तिक पूनम तक, फिर मृगसर से फाल्गुन तक यह फाल्गुन पूर्णिमा होली चौमासी कहलाती है। फिर चैत्र से आषाढ़ तक यह ग्रीष्म कालीन चौमासा है। किन्तु यहाँ पर "चातुर्मास" से वर्षा ऋतु के चार मास की ओर संकेत है। ये चार मास हैं—

श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक—इन चार महीनों में बरसात होती है, ये वर्षा ऋतु के महीने माने जाते हैं, चातुर्मास शब्द से इन्हीं चार महीनों की ओर संकेत किया गया है ।

वर्षा ऋतु के चार मास का महत्त्व

श्रावण, भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक—बरसात के इन चार महीनों का प्राणी जगत में तो महत्त्व है ही, जड़ जगत में भी बहुत महत्त्व है, इनकी अनिवार्य उपयोगिता है।

वैशाख और ज्येष्ठ मास में सूर्य के प्रखर ताप से तपे हुए तवे की तरह पृथ्वी जलने लगती है, सिर पर चिलचिलाती धूप—आग की ज्वाला जैसी, गर्म-गर्म लू की लपटें चलती हैं । सदानीरा नदियों का जल सूख जाता है, वे पतली धारा बन जाती

हैं, कूओं का जल स्तर नीचा उतर जाता है। मानव क्या, प्राणी मात्र ही त्राहि-त्राहि करने लगते हैं। भीष्म-ग्रीष्म के कारण हैजा आदि अनेक रोग भी फैलते हैं। ग्रीष्म ऋतु का वातावरण शारीरिक एवं मानसिक दोनों दृष्टियों से उत्तेजनापूर्ण तथा उद्विग्नता भरा रहता है।

इन सब उत्तेजनाओं से त्राण दिलाती हैं, आकाश से रिमझिम बरसती बूँदें। कालिदास ने तो अपने मेघदूत काव्य में मेघ को दूत बनाकर ही सन्देश भेजा था। उनका हृदय मेघों के दर्शन मात्र से उत्तरंगित हो उठा था और लेखनी से कमनीय कल्पना प्रसूत होने लगी थी। बादलों की रिमझिम का प्रभाव बच्चों के मन पर भी खूब होता है, उनके तन-मन उमंग से भर जाते हैं, वे हँसते-किलकारी भरते रिमझिम बूँदों में नहाते आनन्दित होते हैं।

बरसात होने का एक परिणाम यह होता है कि मार्ग अवरुद्ध हो जाते हैं,पानी भर जाता है, आवागमन रुक जाता है ।

प्राचीन भारत में तो यह स्थिति थी ही, गाँवों में अब भी है । किन्तु नगरों में भी जहाँ वैज्ञानिक उन्नति का प्रकाश पहुँच चुका है, वहाँ भी स्थान-स्थान पर पानी भर जाता है । नाले उफनने लगते हैं । अतः निराबाध आवागमन की समस्या वहाँ भी खड़ी हो जाती है ।

लेकिन बरसात का एक सुखद परिणाम यह होता है कि ग्रीष्म का ताप कम हो जाता है, गर्मी में चलती लू सुखद समीर का रूप ले लेती है । मानव का तन-मन प्रफुल्लित हो जाता है । और प्रफुल्लित तन-मन में शुभ भावनाएँ अँगड़ाई लेने लगती हैं । फलतः कषायों की अग्नि

भी मन्द पड़ जाती है । क्षमा की शीतलता का अनुभव होने लगता है।

वर्षा की रिमझिम करती बूँदें जब कोमल मिट्टी पर गिरती हैं तो उस माटी में अपूर्व उर्वरा शक्ति जग उठती है । किसान खेतों की समृद्धि के सपने संजोये बीज बोता है । और बीजों को अंकुरित-पल्लवित पुष्पित होने की आशा लगाकर बड़ी उमंग से श्रम करता है । "दादुर मोर किसान मन लगा रहे घन ओर.........." ।

मौसम की दृष्टि से वर्षा ऋतु समशीतोष्ण होती है इसलिए कृषिकार्य के लिए तो प्रकृति सर्वथा अनुकूल होती ही है,किन्तु ऋषि-कार्य के लिए भी अर्थात्— धर्म के बीज बोने के लिए भी यह ऋतु सर्वथा अनुकूल रहती है । इसीलिए सन्तजन

एक स्थान पर स्थिर होकर मानव-मन की कोमल भूमि उपदेशों द्वारा तैयार करते हैं और फिर उसमें धर्म के, शुभ संकल्पों एवं उत्तम संस्कारों के बीज बोते हैं। और जीवन- क्षेत्र को धार्मिकता के वातावरण से हरा- भरा बना देते हैं। कबीरदास के शब्दों में—

कबिरा बादल प्रेम का,
हम पर बरखा आई ।
अन्तर भीगी आतमा,
हरी-भरी वनराई ॥

इन शुभ भावनाओं की वर्षा सन्त-सती और श्रमण-श्रमणी के सम्पर्क और सत्संगति से होती है ।

साधु-संन्यासी और विशेष रूप से जैन श्रमण-श्रमणी चातुर्मास में विहार नहीं करते, एक स्थान पर रहकर ही धर्म की

गंगा बहाते हैं । यह उनका कल्प है, आचार है, मर्यादा है ।

इस मर्यादा का कारण है—वर्षाऋतु में जीवों की अधिक उत्पत्ति हो जाना। आवागमन से उन सूक्ष्म जीवों की हिंसा न हो जाय, उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो, इस दया और अहिंसा की भावना से श्रमणजन एक स्थान चार महीने वास करते हैं । इसे उनका वर्षावास या चातुर्मास कहा जाता है ।

वर्षावास की ऐसी ही परम्परा वैदिक और बौद्धधर्म में भी पाई जाती है। प्राचीनकाल में वैदिक संन्यासी, परिव्राजक और बौद्धभिक्षु एक ही स्थान पर रहते थे, वर्षा ऋतु में गमनागमन नहीं करते थे ।

महाभारत में भी ऐसे प्रसंगों का उल्लेख है और तथागत बुद्ध ने तो अपने

भिक्षुओं को वर्षावास में स्थिरवास करने की प्रेरणा कई स्थलों पर दी ।लेकिन काल के अन्तराल से वैदिक साधु संन्यासी और बौद्ध भिक्षुओं में वर्षावास के विषय में शिथिलता आ गई जबकि जैन साधु-साध्वी वर्षावास के नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन करते रहे हैं।

लेकिन साथ ही भारत की ये तीनों परम्पराएँ एक बात में एकमत हैं कि कोई लौकिक शुभ कार्य इन दिनों में नहीं किये जाते । विवाह आदि नहीं होते ।

वैदिक परम्परा ने इसका कारण यह बताया कि चातुर्मास में देव सो जाते हैं । देव से वैदिक परम्परा में अभिप्राय विष्णु से है ।

वैदिक पुराणों में उल्लेख है कि विष्णु भगवान आषाढ़ शुक्ला ११ को सो जाते

हैं और कार्तिक शुक्ला ११ को उनकी नींद टूटती है, सुषुप्ति से जाग्रत अवस्था में आते हैं । और उनकी जाग्रत दशा में ही विवाह आदि लौकिक शुभ कार्य किये जाने चाहिए, सुषुप्ति दशा में नहीं । उनके जागने की तिथि कार्तिक शुक्ला ११ को 'देवोत्थान' कहा जाता है और वैदिक परम्परा के अनुयायी इस दिन हर्षोत्सव मनाते हैं ।

ये कारण तो अपनी-अपनी परम्परा और धारणा के अनुसार हैं; लेकिन उद्देश्य तो एक ही है कि वर्षाऋतु में लौकिक शुभकार्य भी नहीं किये जाते । अतः धर्म साधना का अवसर अधिक मिलता है ।

आध्यात्मिक महत्व

चातुर्मास का आध्यात्मिक महत्व तो और भी अधिक है ।

वैदिक परम्परा में श्रावण मास को

शिवजी का मास माना गया है। श्रावण शुरू होते ही मंदिरों के घण्टे-घड़ियाल बज उठते हैं संपूर्ण भारत में श्रावण मास के चारों सोमवारों को शिवजी की विशेष उत्साह से पूजा-अर्चना की जाती है । पूरे श्रावण मास तो चलती ही रहती है ।

इसी प्रकार भाद्रपद कृष्णा अष्टमी को श्रीकृष्ण जन्म दिवस के रूप में संपूर्ण भारत में मनाया जाता है ।

यों भादवा विष्णु या श्रीकृष्ण का महीना है ।

आश्विन मास देवी-पूजा के लिए निश्चित है । कलकत्ते (बंगाल) की काली-पूजा बहुत प्रसिद्ध है, नौ दिन का विराट उत्सव मनाया जाता है । और फिर दसवें दिन दशहरे का विशाल उत्सव होता है, जिसमें हजारों व्यक्ति भाग लेते हैं ।

देवी-पूजा, नवरात्रि, नवदुर्गा और दशहरा– यह तो संपूर्ण भारत में मनाये जाने वाले पर्व हैं । दशहरे के लिए कहा जाता है कि इस दिन श्रीराम ने रावण पर विजय प्राप्त की थी ।

इसी तरह कार्तिक मास में दिवाली, हिन्दुओं का सबसे बड़ा पर्व आता है ।

इस रूप में धर्म जागरणा-धार्मिक उत्साह वैदिक अथवा सनातन धर्मावलम्बियों में भी, वर्षा के चार मासों में खूब होता है ।

लेकिन जैन धर्मानुयायियों के चातुर्मास—वर्षा के चार महीनों में होने वाली धर्मजागरणा, धर्म-साधना और धर्मोत्साह का रंग ही कुछ अनूठा अलग रंग लिये है ।

जैन परम्परा के चातुर्मास के उद्देश्य

जैन श्रमण-श्रमणी अनायास अथवा

निरुद्देश्य ही चार मास तक एक स्थान पर नहीं रुकते । अपितु चातुर्मास का उनका एक निश्चित उद्देश्य होता है और वह उद्देश्य मुख्यरूप में दो हैं—(१) धर्मजागरणा तथा (२) तपःसाधना ।

चातुर्मास में एक स्थान पर रहकर श्रमण-श्रमणी स्वकल्याण के साथ-साथ पर-कल्याण, लोककल्याण की साधना करते हैं । क्योंकि जैनश्रमण जितना स्वकल्याण के लिए प्रतिबद्ध होता है, उतना ही लोक-कल्याण के लिए भी । इसीलिए उसका एक विरुद 'स्व-पर-कल्याणकारी' भी कहा गया है ।

चातुर्मास के कल्प-सम्बन्धी एक और बात जानने योग्य है । शास्त्रों में ऐसा उल्लेख आता है कि प्रथम और अन्तिम तीर्थंकर के श्रमण आषाढ़ी पूनम से

कार्तिकीपूनम तक एक स्थान पर रहकर चार मास तक वर्षावास करते हैं और मध्य के २२ तीर्थंकरों के श्रमण-श्रमणी आषाढ़ी पूनम से संवत्सरी-पर्यूषण तक वर्षावास करते हैं। इसके आगे यदि आवश्यक हो तो वे रुकते हैं अन्यथा विहार भी कर सकते हैं।

लेकिन वर्तमान में अन्तिम तीर्थंकर भ. महावीर का शासन चल रहा है और उनके अनुयायी चार मास के वर्षावास की परम्परा का पालन दृढ़ता के साथ कर रहे हैं ।

चातुर्मास के मुख्य उद्देश्य हैं—

१. जीवदया अर्थात् जीव-विराधना से बचना

२. तपःसाधना उपवास से लेकर लम्बी तपस्या करना

३. धर्म-जागरणा तथा गृहस्थ वर्ग को धर्माराधना के लिए प्रेरणा/मार्गदर्शन देना।

वस्तुस्थिति ऐसी है कि जिस क्षेत्र में भी जैन श्रमण-श्रमणी चरण रखते हैं उनके उत्कृष्ट चारित्र और उज्ज्वल तप से प्रभावित होकर वह क्षेत्र धर्मक्षेत्र के रूप में परिवर्तित हो जाता है, लोगों में धर्मोत्साह जाग उठता है ।

जीवदया चातुर्मास का पहला उद्देश्य है । जीव-दया का अभिप्राय है—प्राणीमात्र के रक्षण की, उनके कल्याण की भावना रखना, किसी भी जीव की, चाहे वह क्षुद्र से क्षुद्र क्यों न हो, उसकी हिंसा नहीं करना, कष्ट नहीं देना, उसको संताप न देना ।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक प्राणी को अभय देना ।

अभय और दया एक ही सिक्के के दो

पहलू हैं । कष्ट में पड़े प्राणी को सहायता देना, उसका दुःख दूर करना दया है तो अभय उस संकटग्रस्त प्राणी का संकट दूर करके उसे निर्भय बनाना है । दया के ये दोनों रूप Negative,Positive के समान हैं। जैसे नेगेटिव और पोजीटिव दोनों धाराओं का संबन्ध जुड़ने से विद्युत कार्यकारी होती है, उसी प्रकार दया की पूर्णता भी रक्षा और अभयदान—इन दोनों प्रवृत्तियों से होती है ।

तपःसाधना चातुर्मास का दूसरा उद्देश्य है । तप, उसको कहा जाता है, जिससे आठ प्रकार की कर्मग्रन्थियों का नाश होता है । साधारण भाषा में तप द्वारा सभी प्रकार के दुःख मिटते हैं, आत्मा शुद्ध-परिशुद्ध बनती है—

"तवेण परिसुज्झइ ।"

जैन शास्त्रों में १२ प्रकार का तप बताया गया है ।

लेकिन जैन धर्मानुमोदित तप न तो देह-पीड़ा है और न चमत्कार-प्रदर्शन, तथा न लब्धि आदि की प्राप्ति का प्रयास ही है । यह तो एकमात्र कर्म-निर्जरा और आत्म-विशुद्धि का प्रयास है ।

जैन साधक इसी उद्देश्य से तप करता है—चाहे वह साधक श्रमण हो, अथवा श्रावक; उसका एकमात्र यही उद्देश्य होता है ।

चातुर्मास का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है—समाज-संगठन । साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका रूप चारों तीर्थ एक स्थान पर एकत्रित होते हैं । उस समय संगठन की भावना बलवती होती है । साधु- साध्वी भी प्रेरणा देते हैं । श्रावक-श्राविका भी इस पर विचार करते हैं कि संगठन कैसे मजबूत हो?

दूर-दूर रहने वाले स्वधर्मि बन्धु परस्पर मिलते हैं । एक स्थान पर रहते हैं, जिस कारण उनमें विचार विनिमय चलता है और एकता का सूत्र सुदृढ़ होता है ।

कहा है—संघे शक्तिः कलौयुगे—कलियुग यानी वर्तमान काल में संगठन में ही शक्ति है । देश में प्रजातन्त्रात्मक शासन प्रणाली है । इसमें वही दल अपनी सरकार बनाता है, शासन का स्वामी होता है, जो अत्यधिक संगठित हो ।

संगठन का महत्व सामाजिक, धार्मिक, पारिवारिक सभी क्षेत्रों में है । संगठित समाज जल्दी उन्नति करता है; जबकि असंगठित समाज पिछड़ जाता है।

इसके साथ ही समाज-सेवा भी एक आवश्यक उद्देश्य है । समाज में बहुत से

भाई-बहन अभावग्रस्त होते हैं, कोई बीमारी के कारण तो कोई बेरोजगारी के कारण, अनाथ बच्चे और विधवा महिलाएँ भी होती हैं, बहुत से गरीबी के कारण भी अभावों की चक्की में पिसता जीवन गुजारने को विवश होते हैं ।

इन सबके प्रति समाज का कर्तव्य है। इन्हें सहायता देना साधर्मि-वात्सल्य कहलाता है । लेकिन सहायता ऐसी न हो कि इन्हें सदा के लिए परमुखापेक्षी बनाये रखे; अपितु ऐसी सहायता करनी चाहिये जिससे कि ये अभावग्रस्त व्यक्ति भी अपने पैरों पर खड़े होकर सम्मानपूर्ण सफल जीवन जी सकें ।

गरीबी दान से नहीं, स्वावलम्बन से दूर होती है ।

समाजसेवा की ऐसी योजनाएँ चातुर्मास

में बनाई जा सकती हैं, और उनका कार्यान्वियन भी किया जा सकता है।

यह तो चातुर्मास के लोकोपकारक रूप हैं, उद्देश्य हैं, किन्तु इसका सबसे बड़ा और प्रधान उद्देश्य है—धर्मजागरणा, धर्म-उत्साह,आत्म-विशुद्धि,अध्यात्म-साधना ।

आत्म-साधनारूप अध्यात्म-विशुद्धि के लिये संयम एवं तप-जप की साधना सबसे महत्वपूर्ण साधना है । तप-जप-सामायिक - सेवा सब इसीलिए किये जाते हैं कि आत्मा से कर्मों का मैल हटके उज्ज्वलता बढ़े ।

अशुभ भावों का त्याग और शुभ तथा शुद्ध भावो में रमण करना, कषायों-विषयों को छोड़कर आत्म-निरीक्षण-प्रक्षालन भी आध्यात्मिक साधना का एक अंग है ।

चातुर्मास काल में लौकिक प्रवृत्तियाँ

कम हो जाती हैं । इस काल का सदुपयोग भौतिक धन-वैभव की लालसा का त्याग कर आध्यात्मिक सम्पदा के उपार्जन में किया जाये तो सर्वत्र सुख ही सुख की वृष्टि होगी; ठीक उसी तरह जैसे श्रावण मास में शीतल-सुखद जल वर्षा होती है ।

प्रकृति का वातावरण भी इन चार महीनों में सुख और शांतिप्रद रहता है, यह समय मानसिक-आत्मिक शांति के लिये भी अनुकूल है ।

चातुर्मास के विशेष कार्यक्रम

चातुर्मास के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये विशेष कार्यक्रम का निर्माण और कार्यान्वयन इस प्रकार किया जा सकता है—

(१) **धर्म-शिक्षण**—बालक, युवक, प्रौढ, महिलाओं आदि को चार मास का पाठ्यक्रम

बनाकर धार्मिक शिक्षण देना । धर्म संस्कार देना ।

इस शिक्षण पाठ्यक्रम का महत्त्व बच्चों में शुभ संस्कार भरना और महिलाओं को धर्म का वास्तविक स्वरूप समझाने में है । दोनों ही रूपों में यह अनिवार्य है । बालक सुसंस्कारी बनेंगे तो नीतिमान नागरिक बनकर सफल जीवन बितायेंगे और साथ ही धर्म के प्रति अभिमुख रहेंगे । महिलाओं को जब धर्म के वास्तविक रूप का ज्ञान हो जायेगा तब समाज में फैली हानिकारक कुरूढ़ियों की जड़ स्वयं ही हिल जायेगी और बच्चों में अच्छे संस्कार स्वतः जागृत होंगे ।

इस रूप में यह पाठ्यक्रम बहुत लाभप्रद सिद्ध होगा ।

(२) प्रत्येक पक्ष में कम से कम एक

दिन तो सामायिक दिवस, स्वाध्याय दिवस या क्षमा दिवस के रूप में मनाया ही जाना चाहिए । यदि अधिक दिन इसी प्रकार मनाए जा सकें तो और भी अच्छा है । वस्तुतः चातुर्मास आध्यात्मिक-साधना के लिए ही है और सामायिक, स्वाध्याय, क्षमा ये सब आत्म-विशुद्धि के कारक ही हैं। सिद्धि प्राप्त करने के आवश्यक सोपान हैं ।

(३) प्रतिदिन एक घण्टा ध्यान-मौन की साधना सभी भाई-बहन,श्रावक-श्राविकाएँ करें ।

(४) स्वधर्मिवात्सल्य और संगठन दृढ़ करने के प्रयास भी चातुर्मास के अवश्य करणीय कर्तव्य हैं ।

चातुर्मास क्षमा और तप का अपूर्व प्रसंग है । इन चार मासों में अधिक से

अधिक क्षमा की साधना और तप की आराधना करनी चाहिए ।

तप की आराधना तो चातुर्मास में भाई-बहन करते ही हैं । उपवास से लेकर अठाई, मासखमण और यहाँ तक कि चार महीनों के तप की आराधना भी कुछ श्राविकाएँ कर लेती हैं । लेकिन यदि तप के साथ क्षमा की भी आराधना करें तो सोने में सुहागा की उक्ति चरितार्थ हो जाय ।

भगवान महावीर ने कहा है—क्षमा से आत्मा में प्रसन्नता-प्रफुल्लता उत्पन्न होती है। आन्तरिक हर्ष से आत्मिक आनन्द की उपलब्धि होती है, आत्मिक-सुख का रसास्वादन होता है ।

चातुर्मास में करणीय अन्य कृत्य

श्राद्ध विधि नामक ग्रन्थ में चातुर्मास में किये जाने वाले कृत्यों की विस्तृत सूची

दी है । जिनमें से मुख्य ये हैं—

१. चार महीनों के लिए नये नियम ग्रहण करना ।

२. पूर्व गृहीत व्रतों में और मर्यादा करना ।

३. प्रतिदिन व्याख्यान श्रवण करना।

४. प्रतिदिन नियमित सामायिक करना ।

५. प्रतिदिन नियमित स्वाध्याय करना।

[जो लोग वर्ष भर नियमित सामायिक-स्वाध्याय करते हैं अर्थात् जिन्हें जीवन भर के सामायिक स्वाध्याय का नियम हैं वे इन साधनाओं में अधिक समय लगाएँ। एक सामायिक करते हों तो दो या तीन सामायिक करें, प्रतिदिन घण्टे भर स्वाध्याय करते हों तो चातुर्मास में दो-तीन घण्टे स्वाध्याय करें ।]

६. अप्रासुक जल का त्याग ।

७. दो-तीन बार छानकर जल का उपयोग ।

८. सचित्त का त्याग ।

९. हरित् वस्तु लीलोती का त्याग ।

१०. रात्रिभोजन का त्याग ।

११. चार महीनों तक ब्रह्मचर्य का पालन करना और यदि इतना सम्भव न हो सके तो यथाशक्य करें, कम से कम पर्वतिथियों में तो ब्रह्मचर्य का पालन अवश्य ही करना चाहिए ।

१२. तेल, गुड़, घी, दही आदि के उपयोग में सावधानी बरतना चाहिए । वे खुले न रहें, चलितरस न हों ।

१३. स्नान आदि के लिए लीलन-फूलन वाला पानी उपयोग में नही लेना चाहिए।

१४. पर्व तिथियों में उपवास या एकासन करना ।

१५. इन चार महीनों में गृह-निर्माण आदि आरम्भजन्य कार्य नहीं करना ।

१६. श्रावण-भाद्रपद मास में बासी अन्न नहीं खाना ।

१७. प्रतिदिन पात्रदान की भावना करना ।

१८. प्रतिदिन स्वधर्मि-सेवा का प्रयास ।

१९. रुग्ण, वृद्ध, असहाय, दीन-अनाथ आदि की सेवा का प्रयास ।

२०. प्रतिदिन कुछ न कुछ धर्मदान, अनुकम्पादान करना ।

२१. मूक जीवों की दया, उनकी रक्षा तथा पालन-पोषण के लिए कुछ न कुछ योगदान करना ।

२२. बारह व्रत आदि में विशेष उपयोग रखना ।

२३. यथाशक्ति तप का आचरण करना ।

२४. पाक्षिक प्रतिक्रमण एवं पौषध करना ।

२५. मास के पर्व—दो अष्टमी [एक शुक्ल पक्ष की और दूसरी कृष्ण पक्ष की] दो चौदस, पूनम, अमावस्या इन पर्व दिन में उपवास या ऊनोदरी तप करना ।

२६. दस विध धर्म का यथाशक्ति पालन करना ।

[अभि. भाग ३, पृ. ११६९ से उद्धृत]

चातुर्मास में पर्वों की श्रृंखला

वर्षा ऋतु के चार मास में अनेक पर्व आते हैं । पर्वों की एक सुन्दर श्रृंखला ही बन गई है, इन चार महीनों में । देखिए—

गुरु-पूर्णिमा—जैन श्रमणों का चातुर्मास आषाढ़ी पूनम से प्रारम्भ होता है । और वैदिक परम्परा के अनुसार यह गुरु पूर्णिमा कहलाती है । द्वैपायन व्यास ऋषि का जन्म इसी दिन हुआ माना जाता है । गुरु ज्ञान-विज्ञान तथा आचार का आधार होता है । शिष्य गुरु- चरणों में समर्पित होकर ज्ञान-आचरण की शिक्षा प्राप्त करता है । गुरु अपने शिष्य को दिशा बोध देते हैं, उसके जीवन का निर्माण करते हैं ।

इस दृष्टि से गुरु-पूर्णिमा का भारतीय संस्कृति और मानव जीवन में जो महत्व है, उसे अवगणित नहीं किया जा सकता। गुरु पूर्णिमा धर्म-शिक्षा, गुरु-सेवा एवं विनय की ओर इंगित करती है ।

श्रावणी प्रतिपदा—चातुर्मास का दूसरा दिन है—श्रावणी प्रतिपदा, श्रावण कृष्णा

एकम । जैन इतिहास में इसका अत्यधिक महत्व है ।

दिगम्बर परम्परा के अनुसार श्रावणी प्रतिपदा को ही भ. महावीर ने अपना प्रथम प्रवचन मध्यम पावा में दिया था । (यद्यपि भ. महावीर को केवलज्ञान की उपलब्धि वैशाख सुदी १० को ही हो चुकी थी, लेकिन योग्यपात्र के अभाव में वे मौन रहे थे।) भगवान के प्रथम प्रवचन से धर्म का शुष्क होता कल्पवृक्ष पुनः हरा-भरा हो गया । इन्द्रभूति गौतम आदि अनेक विद्वानों ने भगवान का शिष्यत्व ग्रहण किया और भगवान ने चतुर्विध तीर्थ की स्थापना की ।

इस रूप में श्रावणी प्रतिपदा का यह दिन श्रुतज्ञान का प्रथम पर्व बन गया ।

अब लीजिए पर्वों की श्रृंखला—इन

महीनों में कई तीर्थंकरों के कल्याणक भी हुए और अनेक महापुरुषों के जन्म भी, जिनके तप, तेज, उदार और विशाल हृदयता, समाज—सेवा तथा संगठन, परोपकार आदि बहुमुखी कल्याणकारक प्रवृत्तियों से जिनशासन चमक रहा है ।

श्रावण कृष्णा तीज को ग्यारहवें तीर्थंकर श्री श्रेयांसनाथ का मोक्ष कल्याणक, सप्तमी को चौदहवें तीर्थंकर अनन्तनाथ का च्यवन कल्याणक, अष्टमी को इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ का जन्म कल्याणक, नवमी को सत्रहवें तीर्थंकर कुन्थुनाथ का च्यवन कल्याणक दिवस है ।

तीर्थंकरों से सम्बन्धित होने के कारण ये सभी पर्व-दिवस बन गए हैं ।अनेक व्यक्ति इन दिनों में विशेष तप-जप करते हैं।

अब आइये श्रावण शुक्ला में । श्रावण शुक्ला १ परमपूज्य, आचार्य सम्राट आनन्द ऋषिजीम. का जन्म दिवस है ।

वि. सं. १९५७ श्रावण शुक्ला १ को चिंचोड़ी नगर में आपका शुभ जन्म हुआ था ।

आचार्य श्री ज्ञान-चारित्र-तप के तेज पुंज हैं । आप महान सरल आत्मा हैं। आपका दिव्य-भव्य व्यक्तित्व आदरणीय और वन्दनीय है ।

श्रावण शुक्ला २ को भगवान सुमतिनाथ का च्यवन कल्याणक, ५ को बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ का जन्म कल्याणक, ६ को दीक्षा कल्याणक, ८ को तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ का मोक्ष कल्याणक और पूर्णिमा को बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रत का च्यवन कल्याणक है ।

श्रावण सुदी १४ जैन शासन के प्रभावक मरुधरकेसरी मुनि श्री मिश्रीमलजी महाराज की जन्म-जयन्ती है। आप सम्पूर्ण मरुधरा के प्रभावशाली महान संत थे । तेजस्वी धर्मनेता और लोकोपकारी सन्त रहे। आपका ज्ञान बहुत गहरा और चारित्र उत्कृष्ट था । संघ एकता के आप अग्रदूत रहे ।

आपकी पुण्य स्मृति में यह दिन नशाबन्दी दिवस के रूप में स्थायी महत्व प्राप्त कर रहा है ।

रक्षाबन्धन

श्रावण शुक्ला १५ पूर्णिमा का दिन लोक में रक्षाबन्धन पर्व के नाम से प्रसिद्ध है। इस दिन बहनें अपने भाइयों के हाथ में राखी बाँधती हैं और भाई उन्हें रक्षा का वचन देते हैं ।

इस पर्व के प्रारम्भ होने में कई कथाएँ भी वर्णित की गई हैं । जैन परम्परा के अनुसार महामुनि विष्णुकुमार शक्ति का प्रदर्शन करके जैन श्रमण संघ की रक्षा करते हैं तो वैदिक परम्परा के अनुसार विष्णु वामन का रूप रखकर बलि से ३ पग भूमि की याचना करते हैं और फिर विराट रूप बनाकर समस्त भू-मण्डल को ही नाप लेते हैं । इन दोनों कथाओं में नाम-साम्य तो है ही, साथ ही एक प्रेरणा है—विराट बनने की, हृदय को विशाल बनाने की । जैसे महामुनि विष्णुकुमार और विष्णु वामन से विराट बने, वैसे ही हम भी विशाल हृदय बनें । तन चाहे छोटा रहे लेकिन मन विशाल हो । हमारे हृदय में प्राणी-मात्र की रक्षा के संस्कार सुदृढ़ हों । अपना सब कुछ समर्पण करके भी धर्म, राष्ट्र एवं समाज की रक्षा तथा अभिवृद्धि करने का संकल्प जगायें ।

एक प्रसंग ऐतिहासिक भी है—इस पर्व के सम्बन्ध में । मेवाड़ की रानी कर्णावती पर जब बहादुरशाह ने हमला किया तो उसने मुगल शासक हुमायूँ को राखी भेजी । हुमायूँ उस समय बंगाल में था । वह तुरन्त मेवाड़ आया अपनी राखी भेजने वाली बहन की रक्षा के निमित्त ।

इस कथा से बहन-भाई का निश्छल प्रेम प्रगट होता है । हुमायूँ मुसलमान था और कर्णावती हिन्दू । फिर भी वह आया । इससे स्पष्ट होता है कि बहन का प्रेम मजहब से बड़ा होता है, धर्म-सम्प्रदायों की दीवारों में इतनी शक्ति नहीं होती कि बहन-भाई के प्यार को रोक सकें ।

यह प्रेम का पर्व रक्षा का त्यौहार है। आशा करनी चाहिए कि इसी रूप में इस पर्व को मनाया जायेगा ।

भाद्रपद मास तो जैन धर्मावलम्बियों का धर्म-मास ही कहलाता है । अन्य लोग भी जैनियों से यही कहते हैं कि अब तो भादवा आ गया है, आप लोग धर्म में लगेंगे ।

जो महत्त्व मुसलमानों के लिए रमजान के महीने का है, वह जैनों के लिए भाद्रपद मास का है । रमजान के महीने में मुस्लिम भाई रोजे (उपवास) रखते हैं तो भाद्रपद में जैनों के व्रत उपवास चलते हैं । रमजान के बाद मुसलमानों की ईद आती है, जिसमें वे लोग परस्पर मिलते हैं, अपराधों की माफी माँगते हैं और भाईचारा बढ़ाते हैं । संवत्सरी के दिन सभी जैन आबाल-वृद्ध खमत-खामणा करते हैं, वैर-विरोध मिटाते हैं और परस्पर गले मिलते हैं ।

इसी प्रकार की परम्पराएँ वैदिक धर्म में भी हैं और यहाँ तक कि पश्चिमी जगत ईसाई मतालम्बियों में भी हैं । यह बात दूसरी है कि भौगोलिक परिस्थितियों तथा वातावरण की भिन्नता के कारण कहीं ऐसे पर्व शीत ऋतु में मनाये जाते हैं तो कहीं ग्रीष्म ऋतु में ।

"भद्र" शब्द से भी "भाद्र" बनता है। भद्र का अर्थ होता है मंगल और कल्याणकारी । भद्र सरल को भी कहते हैं। भद्रता का भाव लिये भाद्रपद आता है। भाद्रपद तो धर्म मास ही है । इसी मास में सर्वाधिक धर्मसाधना होती है । पर्युषण और संवत्सरी जैसे महापर्व इसी मास में आते हैं । दिगम्बर समाज का दशलक्षणी पर्व भी इसी मास में मनाया जाता है । सम्पूर्ण जैन समाज में धर्मोत्साह छा जाता

है । धर्म का वातावरण बन जाता है, धर्म साकार-सा हो उठता है । इसलिए भाद्रपद को तो हम धर्म-मास कह सकते हैं ।

भाद्रपद मास में कृष्ण पक्ष की ७ के दिन भ. शांतिनाथ का च्यवन और तीर्थंकर चन्द्रप्रभ को निर्वाण प्राप्त हुआ । अष्टमी के दिन सुपार्श्वनाथ भगवान का च्यवन हुआ। तथा शुक्ल पक्ष की नवमी के दिन नौवें तीर्थंकर सुविधिनाथ मुक्त हुए ।

जन्माष्टमी

यह पर्व श्रीकृष्ण के जन्म दिवस के रूप में सम्पूर्ण हिन्दू समाज में मनाया जाता है । गोकुल की परम्परा को मानने वाले भाद्रपद बदी ९ को यह उत्सव मनाते हैं ।

श्रीकृष्ण महान कर्मयोगी महापुरुष थे । इन्होंने उस समय की प्रचलित धाराओं

को नया मोड़ दिया । सामाजिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय चिन्तन को नई दिशा दी । राजनीति में भी प्रेम, विश्वास और कर्तव्य बोध का पाठ पढ़ाया ।

भारत के इस महापुरुष के जन्मोत्सव को मनाकर करोड़ों लोग इन्हें श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं ।

पर्युषण महापर्व

पर्युषण जैन जगत का महान आध्यात्मिक पर्व है । यह भादवा बदी १३ से शुरू होकर सुदी ५ तक—८ दिन का मनाया जाता है । इसे अष्टान्हिक पर्व कहते हैं ।

यह अपने ढंग का अलग ही पर्व है। इसकी प्रेरणा आध्यात्मिक है । इसमें संग्रह/परिग्रह के त्याग की और चार प्रकार के दान की प्रेरणा है । क्षमा, समता,

सयम-साधना, भौतिकता से विरक्ति और आत्मा में अनुरक्ति जगाना इसका लक्ष्य है।

पर्युषणके सातदिवसोंको अलग-अलग प्रकार से व्रत, नियम,साधना आदि का आयोजन कर सामूहिक रूप में धर्म-जागरण करना चाहिए ।

संवत्सरी

प्रेम, मैत्री, सहिष्णुता, क्षमा का सन्देश लेकर आता है—संवत्सरी पर्व । यह पर्व भाद्रपद सुदी ५ को मनाया जाता है । आबाल वृद्ध सभी परस्पर खमत-खामणा करके आपसी वैर-विरोध को मिटाते हैं, क्रोध को उपशमित करते हैं।

आजकल विदेशों में जहां क्षमापना या विश्व मैत्री दिवस मनाया जाता है, जिसे देखकर विदेशी लोग इतने प्रभावित हुए हैं कि उनका कहना है—समूची मानव

जाति के लिए इसे मैत्री दिवस का रूप देना चाहिए ।

यह पर्व विश्वप्रेम, विश्वबन्धुत्व और वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना का साकार रूप है ।

दशलक्षण पर्व

दिगम्बर सम्प्रदाय भाद्रपद सुदी ५ से १४ तक दश दिन का पर्व मनाते हैं। यह पर्व भी आध्यात्मिक है। इसमें भी आत्मा की शुद्धि का ही लक्ष्य रहा हुआ है।

अनन्त चतुर्दशी

दशलक्षण पर्व का अन्तिम दिन भादवा सुदी १४ अनन्त चतुर्दशी के रूप में मनाया जाता है । इसका संकेत आत्मा की अनंत शक्तियों को उद्घाटित करने का है ।

इसके उपरांत क्षमापर्व मनाया जाता है तथा सभी परस्पर खमत-खामणा करते हैं ।

यह भी विश्व-बन्धुत्व और विश्व-मैत्री को प्रवर्द्धित करने में सक्षम और सबल प्रेरणा देता है ।

स्वतन्त्रता दिवस

अधिकतर इसी भाद्रपद मास में स्वतन्त्रता दिवस आता है । वैसे यह राष्ट्रीय पर्व अंग्रेजी तारीख १५ अगस्त को मनाया जाता है ।

यद्यपि यह लौकिक पर्व है; परन्तु इसका महत्व यह है कि देश को आजादी मिली । देश में प्रजातन्त्र स्थापित हुआ । अब अपने देश का शासन अपने देशवासियों के ही हाथ में है ।

आजादी का सुफल भी हुआ है । हमारे देश ने भौतिकता के क्षेत्र में चहुमुखी उन्नति की है और कर रहा है, देश का भविष्य भी उज्ज्वल प्रतीत हो रहा है ।

इसी भाद्रपद मास में हमारे श्रमणसंघ के प्रथम आचार्य महान श्रुतधर श्री आत्माराम जी महाराज का पावन जन्म दिवस आता है । वि. सं. १९३९ भादवा सुदि १२ को राहों (पंजाब) ग्राम में आपश्री का जन्म हुआ । आचार्यश्री आत्माराम जी महाराज श्रुतज्ञान के ज्योति स्तम्भ थे ।

भादवा सुदि १४ को ही स्थानकवासी परम्परा के महान आचार्यश्री जयमलजी महाराज का जन्म महोत्सव मनाया जाता है। वि. स. १७६५ में लांबिया ग्राम में आपश्री का जन्म हुआ । आप महान तेजस्वी साधक और उत्कृष्ट आध्यात्मिक पुरुष थे ।

अब आइये आश्विन मास में । इस मास की अमावस्या के दिन बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ को कैवल्य की उपलब्धि हुई और शुक्ल पक्ष की १४ (चतुर्दशी) के दिन इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ का जन्म हुआ ।

नवपद ओली

आध्यात्मिक दृष्टि से आश्विन शुक्ल पक्ष में नवपद ओली पर्व प्रधान है । कहीं यह पर्व शुक्ला १ से ९ तक मनाया जाता है तो कहीं शुक्ला ६ से पूनम तक । इसमें नवकार मंत्र के नवपदों की आराधना की जाती है, आयंबिल तप किये जाते हैं । श्रीपाल--मैनासुन्दरी के आख्यान पढ़े जाते हैं । ओली पर्व बड़े उत्साह से मनाया जाता है ।

नवकार मन्त्र के ९ पद हैं—(१) णमो अरिहंताणं (२) णमो सिद्धाणं (३) णमो

आयरियाणं (४) णमो उवज्झायाणं (५) णमो लोए सव्वसाहूणं (६) णमो नाणस्स, (७) णमो दंसणस्स, (८) णमो चरित्तस्स (९) णमो तवस्स ।

इन नौ पदों में मुक्ति-प्राप्त, मुक्ति के लिए प्रयासरत और मुक्तिमार्ग– सभी कुछ आ जाता है ।

इनमें से प्रत्येक दिन एक-एक पद का जप, आयबिल और प्रासुक जल का प्रयोग किया जाता है । ओली तप आराधना का बड़ा महत्त्व है ।

देवी-पूजन

आश्विन शुक्ला १ से ९ तक हिन्दू लोग देवी-पूजन करते हैं । कहीं इसे नवदुर्गा कहा जाता है तो कहीं नवरात्रि। बंगाल आदि पूर्वी प्रदेशों में इसका बहुत जोर है । बंगाली तो इसे महोत्सव के रूप में ही मनाते हैं ।

दशहरा

यह पर्व आश्विन शुक्ला १० को मनाया जाता है । इसका सम्बन्ध मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम से जोड़ा जाता है । किंवदन्ती है कि श्रीराम ने इसी दिन रावण पर विजय प्राप्त की थी । इस प्रकार यह पर्व अधर्म पर धर्म की विजय का प्रतीक बन गया है ।

इस पर्व का एक आध्यात्मिक संकेत भी है—१. मन ५ इन्द्रिय विषय और ४ कषाय—इन दस पर विजय प्राप्त करना—इन दशों को अपने काबू में कर लेना, हरा देना—यही दशहरा का वास्तविक और सच्चा स्वरुप है ।

आध्यात्मिक दृष्टि जिसकी प्रमुख है, ऐसा साधक इसी रूप में दशहरा पर्व मनाने का प्रयास करता है ।

विजयादशमी आचार्य श्री भूधरजी महाराज का जन्म-दिवस भी है ।

उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी का जन्म-दिवस

आश्विन शुक्ला १४ वह सौभाग्यशाली दिन है, जिसको उपाध्याय गुरुदेव श्री पुष्कर मुनिजी के जन्म दिन होने का गौरव प्राप्त है । आपका जन्म वि. सं. १९६७ को नांदेशमा में हुआ ।

आपके जीवन में संयम और श्रुत साकार हो उठे हैं । निरन्तर जप-तप और ध्यान में लीन रहते हैं । मुख पर मंद स्मित, आँखों में स्नेह, वात्सल्य का लहराता सागर और तपःतेज से दीप्त भाल आपका बाह्य व्यक्तित्व है, जो प्रत्येक दर्शक को अपनी ओर खींच लेता है और वह आपके चरणों में झुक जाता है ।

संगठन और संघीय अभ्युदय एवं

संघ-ऐक्य के लिए स्थानकवासी जैन समाज में आपका नाम अमर रहेगा । और अमरता की चर्चा में स्थानकवासी परम्परा के परम प्रभावक आचार्य अमर सिंह जी महाराज की पुण्यतिथि भी आती है आश्विन शुक्ला १४ को ।

अब आइये कार्तिक मास पर । चातुर्मास का यह अन्तिम मास है । इस मास में भी कई पर्व आते हैं ।

कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की पंचमी के दिन तीसरे तीर्थंकर संभवनाथ को कैवल्य प्राप्त हुआ, १२ को बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ का च्यवन तथा छठे तीर्थंकर पद्मप्रभु का जन्म हुआ तथा यही तिथि उनका तप कल्याणक दिवस है । अमावस्या के दिन अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर को निर्वाण प्राप्त हुआ। तथा दूसरे दिन

कार्तिक शुक्ला १ को गौतमस्वामी को केवलज्ञान की उपलब्धि हुई इसीलिए यह तिथि गौतम प्रतिपदा कहीं जाती है ।

कार्तिक शुक्ला ५ के दिन ज्ञान पंचमी पर्व आता है ।

दीपावली

दीपावली ज्योति पर्व है । इस दिन घर की, व्यापारिक संस्थानों की सफाई की जाती है, नये कपड़े पहने जाते हैं, बधाई और शुभ कामनाओं के कार्ड भेजे जाते हैं, मिठाई का आदान-प्रदान होता है । लक्ष्मी (धन लक्ष्मी) की पूजा की जाती है । यह इस पर्व का लौकिक अथवा दृश्य स्वरूप है ।

लेकिन इसका आध्यात्मिक स्वरूप भी है, और वह अधिक महत्त्वपूर्ण है । जिस प्रकार बाहरी सफाई/स्वच्छता की जाती है,

घर और व्यापारिक संस्थानों को रंग-रोगन आदि से चमकाया जाता है, उसी प्रकार आत्मा की स्वच्छता भी आवश्यक है । दुष्कर्मों, दुर्भावों, ईर्ष्या, द्वेष, मत्सर आदि के कचरे को आत्मा से बाहर निकाल दिया जाय, आत्मा को स्वच्छ और पवित्र बना लिया जाय तभी दीपावली पर्व मनाना सार्थक हो सकता है।

यद्यपि यह दीपावली पर्व मूलतः एक ही दिन का पर्व है, और इसका कारण तथा आधार है भगवान महावीर का निर्वाण कल्याणक लेकिन चूँकि सम्पूर्ण भारत में यह पर्व मनाया जाता है, जैन तो मनाते ही हैं, हिन्दू भी मनाते हैं, अतः कई घटना प्रसंग जोड़कर यह पर्व पाँच दिन तक मनाया जाता है—कार्तिक कृष्णा १३ से कार्तिक शुक्ला २ तक ।

कार्तिक कृष्णा १३ को वैदिक परम्परा के अनुसार प्रसिद्ध हिन्दू आयुर्विज्ञानी धन्वन्तरि का जन्म दिवस माना जाता है। लेकिन वर्तमान में धन्वतरि त्रयोदशी ने धनतेरस का रूप धारण कर लिया है । इस दिन घर में नई वस्तु बर्तन आदि लाना शुभ माना जाता है। कहीं-कहीं भुगतान करना उचित नहीं माना जाता है । क्योंकि ऐसी मान्यता है कि इस दिन घर से धन निकला तो साल भर तक निकलता ही रहेगा ।

कार्तिक कृष्णा १४ को नरक चतुर्दशी माना जाता है । ऐसा कहा जाता है कि इस दिन श्रीकृष्ण ने नरकासुर का वध किया था ।

लेकिन जनसाधारण इसे छोटी दिवाली कहते हैं । इस दिन घर के द्वार

पर चतुर्मुखी दीपक रखा जाता है, जो इस बात का प्रतीक है कि चारों दिशाएँ प्रकाशमयी बनें, जीवन में चतुर्मुखी आलोक जगे ।

अमावस्या—इस दिन के साथ तो अनेक घटनाएँ जुड़ी हैं—

(१) भगवान महावीर का परिनिर्वाण

(२) रावण विजय के बाद श्री राम का अयोध्या लौटना ।

(३) आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती का स्वर्गवास ।

(४) स्वामी रामतीर्थ द्वारा गंगा की लहरों में समाधि लेना ।

नोट—इसी पक्ष में धन तेरस को उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनिजी का जन्म दिवस आता है। वि. सं. १९८७ धन तेरस के दिन आपश्री का जन्म हुआ ।

-संपादक

(५) सिक्खों के छठे गुरु गोविन्द सिंह द्वारा बन्दीगृह से मुक्त होकर स्वर्णमन्दिर तक की यात्रा करना ।

(६) दैत्यराज बलि का पाताल गमन ।

(७) काली द्वारा महिषासुर का दमन ।

इन विभिन्न घटनाओं के जुड़ने का परिणाम यह हुआ कि दीवाली जन-जन का पर्व बन गया ।

दिवाली जैसे ज्योति पर्व संसार के अन्य देशों में भी प्रचलित हैं, पर उन-उन देशों की परम्पराओं के अनुसार इसका रूप और मनाये जाने के ढंग में पर्याप्त अन्तर परिलक्षित होता है ।

गौतम प्रतिपदा के रूप में कार्तिक शुक्ला १ जैन समाज में प्रसिद्ध है । इस दिन गणधर गौतम को केवलज्ञान प्राप्त हुआ था । इसी रूप में जैन परम्परा इसे मनाती है ।

वैदिक परम्परा इसे अन्नकूट प्रतिपदा कहती है । इस दिन गोवर्धन पूजा की जाती है । कहा जाता है श्रीकृष्ण ने इन्द्र पूजा बन्द करवा दी । जिससे रुष्ट होकर इन्द्र ने ब्रज में घनघोर वर्षा की थी तब श्रीकृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को अंगुली पर उठाकर ब्रजवासियों की रक्षा की थी । हिन्दू परम्परा के अनुसार यह पर्व इसी घटना के स्मरण स्वरुप है ।

कार्तिक सुदी २ भाई बीज के (भ्रातृ द्वितीया) के रूप में मनाया जाता है । जैनपरम्परा के अनुसार इस पर्व से जुड़ी घटना यह है । महाराजा नन्दीवर्धन भगवान महावीर के निर्वाण से बहुत दुखी हुए । उन्होंने खाना-पीना भी छोड़ दिया। तब बहन सुदर्शना द्वितीया के दिन उनके पास गई और बड़े आग्रह से भाई को खाना खिलाया ।

वैदिक परम्परा इस पर्व के साथ यम-यमी की घटना को जोड़ती है । यम-यमी दोनों परस्पर सहोदर भाई-बहन थे । और इस प्रकार इसे यम-द्वितीया कहा जाता है ।

लेकिन वास्तव में भाई-बीज बहन-भाई के निश्छल प्रेम का प्रतीक है । इसमें भाई-बहन के प्रेम के संदर्शन होते हैं।

ज्ञान पंचमी

दिवाली के पाँच दिन बाद कार्तिक शुक्ला ५ का दिन ज्ञान पर्व के रूप में मनाया जाता है और इस दिन को ज्ञान पंचमी कहा जाता है । इस दिन देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण ने आगमों को लिपिबद्ध करने का श्रीगणेश किया था । कुछ मनीषियों का विचार यह भी है कि श्रुत लेखन के कार्य का श्रीगणेश तो पहले ही हो चुका

था और ज्ञान पंचमी के दिन उसकी परिसमाप्ति हुई थी ।

कार्तिक शुक्ला ५ के दिन जो महावीर वाणी को देवर्द्धिगणी ने संकलन किया, वही वाणी आज हमको अंग-आगमों के रूप में प्राप्त हैं ।

जिस प्रकार देवर्धिगणी ने महावीर-वाणी को सुरक्षित किया उसी प्रकार हमारा कर्त्तव्य है कि हम ज्ञान के प्रचार-प्रसार में सहयोग दें । इसी रूप में इस पर्व की महत्ता है ।

दिगम्बर परम्परा में यह पर्व श्रुत पंचमी के नाम से ज्येष्ठ शुक्ला ५ को मनाया जाता है । अंगों के ज्ञाता आचार्य धरसेन ने भूतबलि और पुष्पदंत को आगम सिद्धान्त का गहन ज्ञान प्रदान किया । दोनों मुनियों ने उस ज्ञान को ग्रहण करके ज्येष्ठ

सुदी ५ के दिन षट्खंडागम जैसा विशाल ग्रन्थ रचकर संघ को समर्पित किया।

कार्तिक सुदी १३ भी स्थानकवासी जैन इतिहास में महत्वपूर्ण है । वि. सं. १९३४ कार्तिक शुक्ला १३ को नीमच शहर में एक महापुरुष का जन्म हुआ था जो जैन दिवाकर प्रसिद्ध वक्ता श्री चौथमलजी महाराज के नाम से विश्रुत हुए । श्री जैन दिवाकर जी महाराज ने जैन शासन की प्रभावना में वह अद्भुत कार्य किये जो शताब्दियों तक याद किये जायेंगे ।

कार्तिक शुक्ला चौदस को महास्थविर श्री ताराचन्द जी म. की पुण्यतिथि है । मेवाड़ के बम्बोरा ग्राम में आपका जन्म हुआ । पिता शिवलाल जी और माता ज्ञानकुंवर जी । आचार्य श्री पूनमचन्द जी म. के पास माता के साथ दीक्षित हुए । सेवा-विनय-सहिष्णुता की साक्षात् प्रतिमा

थे । ६३ वर्ष तक संयम साधना कर सन् १९५६ जयपुर में सन्थारा सहित स्वर्गवास हुआ । श्रमण संघ जिस समय बना उस समय आप श्रमण संघ में सबसे बड़े होने से आप महास्थविर की उपाधि से अलंकृत थे ।

अब आता है कार्तिकी पूनम का दिन। यह चातुर्मास का अन्तिम दिन है । लेकिन है बहुत ही महत्वपूर्ण ।

कार्तिकी पूनम दो महापुरुषों के जन्म से गौरवान्वित है । एक हैं—आचार्य हेमचन्द्र और दूसरे हैं—धर्मवीर लोंकाशाह।

आचार्य हेमचन्द्र का जन्म कार्तिकी पूनम, वि. सं. ११४५ को हुआ। आप अनुपम मेधा के धनी और निष्णात साहित्यकार थे। आपने साहित्य की प्रत्येक विधा पर सफलतापूर्वक कलम चलाई। धर्म, दर्शन, इतिहास, व्याकरण, नीति—आदि साहित्य का कोई भी अंग आपकी लेखनी से अछूता

न रहा। त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित्र जैसा महान ग्रन्थ आपकी प्रौढ़ रचना है । इसी श्रृंखला में अर्हं नीति, सिद्ध हेमव्याकरण, कुमारपाल प्रतिबोध आदि रचनाएँ भी अपनी सानी नहीं रखतीं । आपने अपने जीवन में लगभग साढ़े तीन करोड़ श्लोकों की रचना कीं । आपकी उत्कृष्ट मेधा और प्रत्येक विषय के पांडित्य के कारण आपको कलिकाल सर्वज्ञ का विरुद प्राप्त हुआ ।

धर्मवीर लोंकाशाह का जन्म दिवस भी कार्तिकी पूनम है । आप सत्यशोधक और आगमों के मर्मज्ञ थे । धर्म के नाम पर जड़ पूजा के रूप में जो आडम्बर प्रविष्ट हो गया था, वह आपको रुचा नहीं । आपने पाखंड व धर्म के नाम पर फैले आडम्बर को दूर कर आगमसम्मत शुद्ध आचार परम्परा का प्रबल प्रचार किया।

परिणाम यह हुआ कि स्थानकवासी परम्परा के स्थापित होने के अनुकूल

वातावरण बना । इसी कारण आप स्थानकवासी परम्परा के आदि पुरुष अथवा जनक कहलाते हैं ।

जीवराजजी, लवजी, ऋषिजी आदि संतों ने स्थानकवासी परम्परा को आगे बढ़ाया, उसको गति दी । और आज यह परम्परा ज़िसका बीजारोपण लोंकाशाह ने किया था, विशाल वटवृक्ष बनकर फल-फूल रही है और इसकी छाया में अनेक भव्य जीव सुख-शान्तिपूर्वक आध्यात्मिक साधना करके अपने मानव-जीवन को सफल बना रहे हैं ।

कार्तिकी पूर्णिमा का एक महत्व यह भी है कि चार मास तक एक स्थान परअवस्थित रहे साधु-साध्वी अन्य क्षेत्रों में धर्म-जागरणा हेतु प्रस्थान करते हैं । विदाई बेला का वह क्षण अत्यन्त मार्मिक बन जाता है । श्रावक-श्राविकाओं के दिल भरे होते

हैं, उनकी आँखों में आँसू होते हैं और हृदय पुकार रहा होता है—महाराज पुनः पधारने की कृपा करें ।

वस्तुतः कार्तिकी पूनम वह दिन है जो 'विहारचरिया इसिणं पसत्थाः की भावना को साकार रूप देता है । अन्य क्षेत्रों को पवित्र करने के लिए साधुओं के चरण बढ़ते हैं ।

यह कार्तिकी पूनम का सर्वाधिक महत्व है, जो इसे पर्व की संज्ञा प्रदान करने में यथेष्ट रूप से सक्षम है ।

इस प्रकार चातुर्मास पर्वों की अटूट श्रृंखला है और है आध्यात्मिक-साधना का जागरण काल । यही इसका महत्व है, पर्वत्व है क्योंकि ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप—मुक्ति के इन चार उपायों की साधना-आराधना का इस काल में सुअवसर संप्राप्त होता है । ● ●

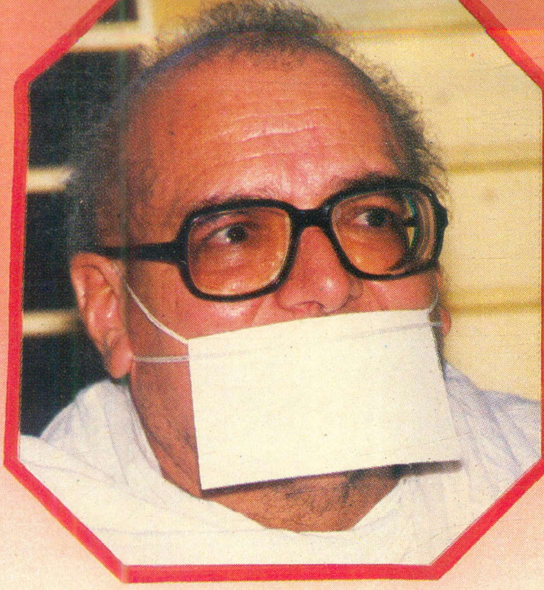

उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनि

जैन तत्वविद्या के प्रज्ञापुरुष सिद्धहस्त लेखक

जन्म : वि. सं. १९८८, धनतेरस, ७ नवम्बर, १९३१

दीक्षा : ईस्वी सन् १ मार्च १९४१

उपाचार्य पद : १२ मई, १९८७, पूना श्रमण सम्मेलन

"एकता" तभी सुरक्षित रह सकती है, जब हम त्याग एवं समर्पण की भावना हो। यदि आप पने स्वार्थ को ही साध्य मानेंगे, अपनी प्रभावना ो ही प्रमुखता देंगे तो फिर दूसरों का क्या ोगा ?

एक-एक ईंट जुड़कर भव्य भवन बनता है, दि कोई ईंट अपने को सबसे बड़ी दिखाने का यास करे या अपना स्वतंत्र अस्तित्व जताने की ेष्टा करे तो क्या वह उस भवन की सुन्दरता बढ़ा कती है ?

समुद्र में मिलकर हर बूंद अपना अस्तित्व मिटा देती है, और बूंद समुद्र बन जाती है। संगठन में हर एक व्यक्ति स्वयं को समर्पित करता है और संगठन की अभिन्न कड़ी बन जाता है।

– उपाचार्य देवेन्द्रमुनि

काशक : श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय, उदयपुर